डॉ. अनिल कुमार प्रसाद
हिन्दी विभाग
महाराजा कॉलेज, आरा

~~सूरदास~~
सूरदास

प्रश्न: भ्रमरगीत के नामकरण के औचित्य पर प्रकाश डालें।

भ्रमरगीत का शाब्दिक अर्थ होता है- भ्रमर का गीत। किन्तु हिन्दी साहित्य में यह विशेष प्रसंग सूचक के रूप में आता है। सूरदासजी ने उद्धव-गोपी संवाद को 'भ्रमरगीत' की संज्ञा दी है। ऐसे भ्रमरगीत का आधार श्रीमद्भागवत का दशम स्कंध है, जिसमें निर्गुणवादी उद्धव गोपियों को उपदेश देने जाते हैं। गोपियाँ उनके उपदेशों को सुनती हैं लेकिन उन्हें यह उपदेश लेशमात्र भी नहीं भाता। इसी बीच श्रीकृष्ण का स्मरण करती [illegible] उड़ता हुआ एक भौंरा वहाँ आ पहुँचता है और गोपियाँ रहते हुए भ्रमर को देखकर उपालंभ देने लगती हैं। यही भ्रमरगीत के नामकरण का औचित्य है। भ्रमरगीत के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए नन्ददुलारे वाजपेयी ने लिखा है — भ्रमरगीत उपालंभ काव्य है और यह काव्य केवल विप्रलंभ शृंगार से संबंधित है। भ्रमरगीत इस प्रकार [illegible] का भाग है जिसमें गोपियों ने भ्रमर के माध्यम से उद्धव पर और उद्धव के माध्यम से कृष्ण पर व्यंग्य किये हैं। इस प्रकार व्यंग्य की दृष्टि से भ्रमरगीत के दो पक्ष हो गये — पहला बुद्धिपक्ष, ~~जिसमें~~ जो है दार्शनिक और चिंतन प्रधान है और दूसरा हृदयपक्ष जो रागात्मक और भावात्मक प्रधान है। भ्रमरगीत का मूल उद्देश्य है ज्ञान पर प्रेम की, मस्तिष्क पर हृदय की और निर्गुण पर सगुण उपासना की विजय।

भ्रमरगीत का एक विशेष [illegible] अर्थ का औचित्य है, जिसमें है भ्रमर जैसी वृत्ति जिसे सामान्यतः प्रचलित शब्दों में हरजाईपन कहा जाता है। क्योंकि कृष्ण मथुरा जाकर प्रकाश रूप से ब्रज की गोपियों को भूला

बैठे हैं। वहीं जाकर उन्होंने कुब्जा नामक मालिन को भी अपना लिया। इस प्रवृत्ति को गोपियों ने भ्रमर वृत्ति माना है। मूलतः इसी संदर्भ में कृष्ण एवं उद्धव की तुलना भ्रमर से और उनकी (ज्ञान योग) के संदर्भ में आत्माहु अनुमान से की गयी है। भ्रमर एवं श्रीकृष्ण में साम्यता है। अतः भ्रमर को माध्यम बनाकर गोपियों के मन कृष्ण के प्रति जो अनेक शिकवे-शिकायतें हैं उसे उपालंभ देकर गोपियों ने भ्रमर के माध्यम से कहा है

डॉ० स्नेहलता श्रीवास्तव ने भ्रमर संबंधी नामकरण के पक्ष में तीन तर्क प्रस्तुत किये हैं — पहला भ्रमर गीत में भ्रमर की उपस्थिति अनिवार्य है। उस प्रकार के भ्रमर गीत में भ्रमर के माध्यम से उपालंभ दिया जाता है। इस स्थिति में गोपियाँ भ्रमर के व्याज से अप्रत्यक्ष रूप से उद्धव तथा उनके निराकार ब्रह्म पर व्यंग्य कर कृष्ण को उपालंभ देती हैं। इस प्रकार के काव्य में व्यंग्य गौण और उपालंभ प्रधान से आलेक हैं। भ्रमर के बहाने हृदय की पीड़ा की मार्मिक अभिव्यंजना भी हो जाती है।

दूसरा पक्ष यह है कि भ्रमर गीत में अपेक्षित श्रृंगार संबंधी उपालंभ तो ज्यों का त्यों रहता है किंतु भ्रमर जुड़ा रहता है। यहीं भ्रमर अनुपस्थित रहता है और उद्धव को ही अलि, मधुप, मधुकर कहकर सम्बोधित किया जाता है। गोपी-उद्धव संवाद में इस स्थिति को देखा जा सकता है।

तीसरा पक्ष यह है कि भ्रमरगीत में वह प्रसंग आता है जिसका संबंध—

नंद-यशोदा वचन में भी है। इन रचनाओं में उपालंभ ~~की~~ भी प्रमुख तत्व के रूप में उपस्थित रहता है। इसकी मूल भावना शृंगारिक नहीं होती। नंद-यशोदा का उपालंभ स्व संबंध दाम्पत्य जीवन से न होकर प्रिय-पुत्र की अविस्मरणीय भावना से ही अधिक है। यद्यपि इस प्रकार ~~की भावना~~ के उपालंभ में नारी प्रणय की भावना नहीं है। इसमें प्रेम की सात्विकता और तीव्रता का भी अभाव माना जा सकता है। प्रिय से वियुक्त होकर नारी ~~का~~ का हृदय जिस वेदना का अनुभव करता है पुत्र से वियुक्त होकर माता का हृदय भी उसके अभाव में उतना ही विकल तथा विह्वल रहता है। भ्रमरगीत के मूल तत्व उपालंभ के वर्तमान रहने के कारण ही आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस प्रकार के समस्त पद को भ्रमरगीत के अंदर माना है। यही कारण है कि उन्होंने 'भ्रमरगीत सार' में नंद-यशोदा संबंधी पदों को भी भ्रमरगीत के अंदर ही माना है।

भ्रमरगीत के लिए कुछ तत्वों की आवश्यकता होती है। सबसे पहले यह देखना चाहिए कि प्रिय के प्रति उपालंभ है या नहीं। दूसरा तत्व विप्रलंभ ~~की~~ वियोग है। विप्रलंभ की असहनीय वेदना में ही प्रियतम के प्रति किया गया उपालंभ भ्रमरगीत के अंतर आता है। इस दृष्टि से सूरदास का भ्रमरगीत इसका अप्रतिम उदाहरण है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी भ्रमरगीत के संबंध में टिप्पणी की है — "सूरसागर का सबसे मर्मस्पर्शी और वाग्वैदग्ध्यपूर्ण अंश भ्रमरगीत है। इसमें गोपियों की वचनवक्रता अत्यंत मनोहारिणी है। ऐसा सुंदर उपालंभ काव्य और कहीं नहीं मिलता।"

उपालंभ विविधता, निरुपायता की सुन्दर अभिव्यक्ति है। व्यंग्य और क्रोध एवं प्रतिक्रिया का रूप अधिक मुखर होता है। अन्योक्ति में तीखापन ह्रदय को ठेस पहुँचाने की प्रवृत्ति है, परन्तु उपालंभ में दैन्य की प्रधानता होती है। व्यंग्य के आधार पर मन को आहत करने का भाव होता है। उपालंभ में अपनी दीनता, विवशता और दैन्य का प्राधान्य होता है। उपालंभ आत्मपीड़न का रूप है, व्यंग्य पर पीड़न का।

'भ्रमरगीत' के संबंध में उपर्युक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि यह एक अनुपम और सार्थक नाम है। क्योंकि इस नाम की लोकप्रियता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि अनेक युग के समर्थ बड़े कवियों ने भ्रमर गीत के संबंध में कुछ न कुछ अवश्य लिखा है। कुछ विद्वान विद्यापति को भ्रमर गीत का प्रथम रचयिता मानते हैं। इनके पहले कालिदास ने 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' में राजा दुष्यन्त के आगमन से शकुन्तला को [illegible] किया। इनके अलावे सूरदास, परमानंददास, नंददास एवम तुलसीदास से लेकर आधुनिक काल के कवियों तक ने भ्रमरगीत पर कुछ न कुछ लिखा है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'द्वापर' नामक एक काव्य भ्रमर-गीत पर लिखा है। अयोध्या सिंह उपाध्याय ने 'प्रियप्रवास' और जगन्नाथ दास रत्नाकर ने 'उद्धव-शतक' नामक ग्रंथ भ्रमरगीत पर लिखा है। सत्यनारायण कविरत्न ने 'भ्रमरदूत' के नाम से एक रचना की। इससे स्पष्ट है कि भ्रमरगीत नामकरण का औचित्य स्वयं में सिद्ध है।

P.G. Semester II
CC – VI

"Surdas ka Bharmar Geet"